भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन : अन्तर्विरोध के कुछेक आयाम

डॉ. बिरजू कुमार सिंह

1885 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना और अगस्त 1947 में स्वतंत्रता–प्राप्ति के बीच के लगभग साठ वर्षों का कालखण्ड हमारे देश के लंबे इतिहास में शायद सबसे बड़े परिवर्तन का समय है। 1885 का वर्ष वह समय था जब अंग्रेज इस गुमान में थे कि भारत में उनका राज चिरस्थायी है। आठ वर्ष पूर्व 1877 में देश में अकाल की विभीषिका के बीच एक शानदार दरबार लगा था जिसमें भारत के ब्रिटिश साम्राज्य का अंग होने की घोषणा की गई थी। पितृवत् कल्याणकारी राज्य की विचारधाराएं और साथ में कभी–कभी ट्रस्टीशिप की और स्वायत्त शासन के प्रशिक्षण की बातें पूर्णरूपेण श्वेत और निरंकुश राज्य की वास्तविकताओं पर शायद ही पर्दा डाल सकने में समर्थ रही हो। राजनीतिक निर्णय के कार्य पर और उच्च स्तरों पर प्रशासन के कार्य पर पूर्णरूपेण यूरोपियों का विशेषाधिकार था। 1880 के दशक में भारतीय सिविल सेवा के लगभग नौ सौ पदों में से सोलह को छोड़कर शेष सभी पर यूरोपीय विराजमान थे। 1861 में जब मुट्ठी–भर 'नेटिवो' को प्रादेशिक एवं सुप्रीम काउंसिलों में नामजद किया गया तो इन काउंसिलों की शक्तियों को घटा भी दिया गया। यहां तक कि जिस स्थानीय स्वायत्त शासन को लार्ड रिपन ने बड़े धूमधाम से लागू किया था, वह भी वित्तीय विकेन्द्रीकरण का एक अनिवार्य कदम मात्र था। सैन्य–व्यवस्था जैसे महत्त्वपूर्ण मामलों में तो भारतीयों के हाथ में नाममात्र उत्तरदायित्व भी नहीं सौंपा जाता था। 1947 तक कोई भी भारतीय सेना में ब्रिगेडियर से अधिक नहीं हो सकता था।